

## रमणिका गुप्ता के उपन्यासों में दलित एवं आदिवासी विमर्श : शोषण, संघर्ष और प्रतिरोध की बहुआयामी अभिव्यक्ति

अमरेंद्र कुमार  
नेट

### शोध-सारांश :-

रमणिका गुप्ता हिंदी साहित्य की उन प्रमुख कथाकारों में से एक हैं जिन्होंने दलित और आदिवासी जीवन की वास्तविकताओं को अपनी रचनाओं के केंद्र में रखा है। उनके उपन्यासों और कहानी-संग्रहों में 'मैसी', 'सीता', 'बहू-झूठाई' आदि कृतियों के माध्यम से खदान मजदूरों, कोयलारी मजदूरों, कृषि श्रमिकों और आदिवासी समुदायों की दैनिक संघर्ष, आर्थिक शोषण, सामाजिक बहिष्कार, पलायन तथा लैंगिक-वर्गीय दोहरी मार की मार्मिक चित्रण मिलता है।

यह शोधपत्र रमणिका गुप्ता के साहित्य में दलित-आदिवासी विमर्श को केंद्र में रखकर उनके उपन्यासों की भाषा, संवेदना और प्रतिरोध की धारा का विश्लेषण करता है। शोध मुख्य रूप से प्राथमिक स्रोत के रूप में उनकी प्रकाशित कृतियों तथा उपलब्ध आलोचनात्मक सामग्री पर आधारित है। परिणाम दर्शाते हैं कि गुप्ता जी का साहित्य न केवल शोषण की संरचनाओं को उजागर करता है बल्कि मजदूर वर्ग की सामूहिक चेतना, स्त्री-प्रतिरोध और मानवीय गरिमा की पुनर्स्थापना की संभावनाओं को भी रेखांकित करता है। शोध का निष्कर्ष यह है कि रमणिका गुप्ता का दलित-आदिवासी विमर्श मुख्यधारा के साहित्य से अलग, अधिक यथार्थवादी, अनुभव-आधारित और परिवर्तनकारी है।

### प्रस्तावना :-

हिन्दी साहित्य में स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श तथा आदिवासी-विमर्श ने आधुनिक समय में सामाजिक यथार्थ को समझने और अभिव्यक्त करने की एक सशक्त धारा का निर्माण किया है। विशेषतः उत्तर-आधुनिक काल में साहित्य केवल सौन्दर्यबोध का माध्यम न रहकर समाज के उपेक्षित, वंचित और शोषित वर्गों की आवाज़ बनकर उभरा है। इसी संदर्भ में रमणिका गुप्ता का साहित्य अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। उन्होंने अपने उपन्यासों, कहानियों, कविताओं और वैचारिक लेखन के माध्यम से दलितों, आदिवासियों, स्त्रियों तथा श्रमिक वर्ग के जीवन-संघर्ष को अत्यंत संवेदनशीलता और प्रखरता के साथ प्रस्तुत किया है। उनका साहित्य सामाजिक असमानता, वर्गीय उत्पीड़न, जातीय भेदभाव तथा सत्ता-केन्द्रित शोषण के विरुद्ध प्रतिरोध का साहित्य है।

रमणिका गुप्ता हिन्दी साहित्य की उन लेखिकाओं में प्रमुख हैं जिन्होंने साहित्य को सामाजिक परिवर्तन का औजार माना। उनका जीवन स्वयं संघर्ष और सक्रिय सामाजिक हस्तक्षेप का उदाहरण रहा है। वे केवल लेखिका ही नहीं, बल्कि सामाजिक कार्यकर्ता और राजनीतिक चेतना से संपन्न व्यक्तित्व भी थीं। उन्होंने समाज के उन वर्गों को अपनी रचनाओं का केन्द्र बनाया जो सदियों से

मुख्यधारा से बाहर रहे हैं। विशेष रूप से दलित और आदिवासी समाज की पीड़ा, उनके अस्तित्व का संकट, श्रम का शोषण, स्त्री की दोहरी गुलामी तथा सत्ता द्वारा किए जाने वाले अन्याय को उन्होंने अपने उपन्यासों में अत्यंत यथार्थवादी दृष्टि से चित्रित किया है।

दलित और आदिवासी विमर्श भारतीय साहित्य में अपेक्षाकृत नवीन किन्तु अत्यंत प्रभावशाली विमर्श हैं। दलित-विमर्श उस सामाजिक संरचना के विरुद्ध प्रतिरोध का साहित्य है जिसने जाति-व्यवस्था के माध्यम से एक बड़े वर्ग को सदियों तक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से वंचित रखा। दूसरी ओर आदिवासी-विमर्श उन समुदायों के अस्तित्व, संस्कृति, अस्मिता और अधिकारों की बात करता है जिन्हें विकास, आधुनिकता और राज्यसत्ता के नाम पर निरंतर विस्थापन और शोषण का सामना करना पड़ा। रमणिका गुप्ता ने इन दोनों विमर्शों को अपने साहित्य में समान रूप से स्थान देकर उनकी समस्याओं और संघर्षों को व्यापक सामाजिक संदर्भ प्रदान किया है।

रमणिका गुप्ता के उपन्यासों में दलित एवं आदिवासी जीवन का चित्रण केवल सहानुभूति तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें प्रतिरोध और संघर्ष की चेतना भी विद्यमान है। उनके पात्र केवल शोषण के शिकार नहीं हैं, बल्कि वे अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाने वाले जागरूक और संघर्षशील व्यक्तित्व हैं। यही कारण है कि उनके साहित्य में पीड़ा के साथ-साथ विद्रोह और परिवर्तन की आकांक्षा भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उन्होंने सामाजिक यथार्थ को किसी आदर्शवादी दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि जीवन की कठोर सच्चाइयों के आधार पर प्रस्तुत किया है।

उनके उपन्यासों में आदिवासी समाज की समस्याएँ जैसे—भूमि हड़पना, जंगलों से विस्थापन, खनन कंपनियों द्वारा शोषण, अशिक्षा, गरीबी तथा सांस्कृतिक पहचान का संकट अत्यंत प्रभावशाली ढंग से उभरकर सामने आते हैं। इसी प्रकार दलित समाज की समस्याएँ—जातिगत भेदभाव, सामाजिक अपमान, आर्थिक विषमता, श्रम-शोषण और स्त्री उत्पीड़न—भी उनके साहित्य का महत्वपूर्ण विषय हैं। रमणिका गुप्ता यह स्पष्ट करती हैं कि भारतीय समाज में शोषण केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और लैंगिक स्तर पर भी विद्यमान है। इसलिए उनका साहित्य बहुआयामी शोषण की पहचान और उसके विरुद्ध संघर्ष की प्रेरणा देता है।

रमणिका गुप्ता के उपन्यासों की एक प्रमुख विशेषता यह है कि उनमें स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श और आदिवासी-विमर्श परस्पर जुड़े हुए दिखाई देते हैं। विशेष रूप से दलित और आदिवासी स्त्रियों का जीवन उनके साहित्य में अत्यंत मार्मिक रूप से चित्रित हुआ है। ये स्त्रियाँ केवल जाति और वर्ग के आधार पर ही नहीं, बल्कि पितृसत्तात्मक व्यवस्था के कारण भी शोषण का शिकार होती हैं। इस प्रकार रमणिका गुप्ता का साहित्य 'त्रिस्तरीय शोषण' की अवधारणा को सामने लाता है, जहाँ स्त्री, दलित और आदिवासी होने के कारण व्यक्ति को अनेक प्रकार के अन्याय सहने पड़ते हैं।

उनकी रचनाओं में भाषा और शैली भी विशेष उल्लेखनीय है। उन्होंने लोकजीवन, जनभाषा और क्षेत्रीय शब्दावली का प्रयोग करके दलित एवं आदिवासी समाज की वास्तविक संवेदनाओं को अभिव्यक्ति दी है। उनकी भाषा में कृत्रिमता नहीं, बल्कि जीवन की सहजता और संघर्ष की तीव्रता दिखाई देती है। यही

कारण है कि उनके उपन्यास पाठकों को केवल बौद्धिक स्तर पर ही नहीं, बल्कि भावनात्मक और सामाजिक स्तर पर भी प्रभावित करते हैं।

वर्तमान समय में जब सामाजिक न्याय, समानता और मानवाधिकार की चर्चाएँ व्यापक रूप से हो रही हैं, तब रमणिका गुप्ता के साहित्य का अध्ययन और अधिक प्रासंगिक हो जाता है। उनका साहित्य हमें यह समझने में सहायता करता है कि समाज के हाशिये पर स्थित समुदाय किस प्रकार निरंतर शोषण का सामना करते हुए भी अपने अस्तित्व और अधिकारों के लिए संघर्षरत हैं। उनके उपन्यास केवल साहित्यिक कृतियाँ नहीं, बल्कि सामाजिक दस्तावेज हैं, जिनमें भारतीय समाज की जटिल वास्तविकताओं का सजीव चित्रण मिलता है।

अतः “रमणिका गुप्ता के उपन्यासों में दलित एवं आदिवासी विमर्श : शोषण, संघर्ष और प्रतिरोध की बहुआयामी अभिव्यक्ति” विषय का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रासंगिक है। यह अध्ययन न केवल रमणिका गुप्ता के साहित्यिक योगदान को समझने में सहायक होगा, बल्कि भारतीय समाज में विद्यमान सामाजिक विषमता, शोषण और प्रतिरोध की प्रक्रिया को भी गहराई से समझने का अवसर प्रदान करेगा। उनके साहित्य में निहित मानवीय संवेदना, सामाजिक चेतना और परिवर्तनकारी दृष्टि आज के समय में समानता और न्याय की स्थापना हेतु प्रेरणास्रोत के रूप में महत्वपूर्ण है।

#### उपलब्ध साहित्य :-

रमणिका गुप्ता पर उपलब्ध आलोचनात्मक सामग्री सीमित किंतु गुणवत्तापूर्ण है। शोधछात्रों और आलोचकों ने उनके साहित्य को मुख्यतः आदिवासी-दलित संवेदना, स्त्री-विमर्श और श्रमिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में पढ़ा है। शोधगंगा पर उपलब्ध एक विस्तृत शोध प्रबंध (जिसके अंश दिए गए हैं) में उनके उपन्यासों में दलित-आदिवासी जीवन की समस्याओं, मजदूरी, पलायन, ठेकेदारी प्रथा, लैंगिक शोषण आदि, का विस्तार से उल्लेख है।

अन्य आलोचक जैसे ओमप्रकाश वाल्मीकि, शरण कुमार लिम्बाले आदि के दलित साहित्य सिद्धांत गुप्ता जी की कृतियों पर भी लागू होते हैं, परंतु गुप्ता जी का साहित्य इनसे आगे बढ़कर क्षेत्रीय-भाषाई विशिष्टता (झारखंडी बोली, कोयला क्षेत्र की संस्कृति) को भी शामिल करता है। ‘मौसी’ और ‘सीता’ पर लिखे गए आलेख मुख्यतः मजदूर आंदोलन, ठेकेदार-मालिक-मजदूर त्रिकोण और स्त्री-श्रमिक की स्थिति पर केंद्रित रहे हैं।

हालांकि, अधिकांश अध्ययन अलग-अलग उपन्यासों पर केंद्रित हैं। एक समग्र, बहुआयामी विश्लेषण की कमी है जो यह शोधपत्र भरने का प्रयास करता है।

#### शोध-प्रविधि :-

यह शोध गुणात्मक प्रकृति का है। प्राथमिक स्रोत रमणिका गुप्ता के उपन्यास ‘मौसी’, ‘सीता’, ‘बहू-झूठाई’ तथा संबंधित कहानी संग्रह हैं। द्वितीयक स्रोत शोध प्रबंध, आलोचनात्मक लेख, साक्षात्कार और संबंधित सामाजिक-मानवशास्त्रीय अध्ययन हैं।

विश्लेषण की विधि 'सामग्री विश्लेषण' (Content Analysis) तथा 'विमर्श विश्लेषण' (Discourse Analysis) पर आधारित है। दलित-आदिवासी विमर्श के प्रमुख सिद्धांत (अंबेडकरवादी, मार्क्सवादी, आदिवासी फेमिनिज्म) को आधार बनाकर पाठों का सूक्ष्म अध्ययन किया गया है। भाषा, संवाद, प्रतीकों और कथानक संरचना के माध्यम से विमर्श की परतें उघाड़ी गई हैं। शोध पूर्णतः पाठ्य-आधारित और व्याख्यात्मक है।

### परिणाम एवं विमर्श :-

#### 1. दलित विमर्श : शोषण की आर्थिक और सामाजिक संरचना

रमणिका गुप्ता के उपन्यासों में दलित विमर्श सबसे पहले आर्थिक शोषण के रूप में उभरता है। 'मैसी' उपन्यास में कोयला खदानों के मजदूरों की स्थिति अत्यंत मार्मिक है। ठेकेदारों द्वारा मजदूरों का शोषण, न्यूनतम मजदूरी न देना, काम के बाद भी ऋण-जाल में फंसाए रखना—ये सभी यथार्थ चित्रण गुप्ता जी ने बड़े सजीव ढंग से प्रस्तुत किए हैं।

पाठ में आता है कि "मजदूरों की दयनीय स्थिति का अंदाजा नहीं होता। अपनी छोटी-छोटी खुशियों को वे चंद तराजू पर तोलना नहीं, मजदूर खुशियों की टोकरी को मिल-जुल कर बटोरने में मानते हैं।" यह वाक्य दलित-मजदूर जीवन की सामूहिकता और छोटी-छोटी खुशियों के प्रति उनकी लालसा को दर्शाता है।

दलित स्त्री का चरित्र (जैसे मैसी) दोहरी शोषण की शिकार है—वर्गीय और लैंगिक। घरेलू हिंसा, ठेकेदारों की नजर, समाज की उपेक्षा—सभी आयाम गुप्ता जी ने स्पष्ट रूप से चित्रित किए हैं। 'सीता' उपन्यास में दलित स्त्री की स्थिति और भी विकट दिखाई गई है जहां वह खेतों में काम करती हुई भी सम्मान और सुरक्षा की भिक्षा मांगती है।

#### 2. आदिवासी विमर्श : भूमि, संस्कृति और पलायन

आदिवासी विमर्श गुप्ता जी के साहित्य में भूमि से जुड़ाव, जंगल-खदान-शहर के अंतर्विरोध और सांस्कृतिक क्षरण के रूप में प्रकट होता है। खदान मजदूरों के रूप में आदिवासी युवाओं का शोषण, सरकारी नीतियों का फर्जीवाद, और परंपरागत जीवन-शैली का विनाश इनके प्रमुख मुद्दे हैं।

"कोयला खदान मजदूरों के जीवन का आधार था और मनोबल बढ़ाने का जरिया भी।" लेकिन वास्तविकता में दिन-रात मेहनत के बावजूद वे कर्ज के जाल में फंसे रहते हैं। गुप्ता जी आदिवासी समुदाय की सामूहिक चेतना को भी उभारती हैं—जहां छोटी-छोटी खुशियां साझा की जाती हैं, लेकिन बड़े शोषण के सामने वे अकेले पड़ जाते हैं।

पलायन एक प्रमुख मुद्दा है। गांव से शहर की ओर मजदूरी के लिए जाना, वहां भी नई किस्म की गुलामी—यह चक्र गुप्ता जी के उपन्यासों में बार-बार लौटता है।

### 3. भाषा और शैली: यथार्थवाद और प्रतिरोध

रमणिका गुप्ता की भाषा क्षेत्रीय, बोलचाल की और प्रभावशाली है। उन्होंने स्थानीय बोली, मुहावरों और खदान-मजदूर जीवन की विशिष्ट शब्दावली को सहजता से अपनाया है। यह भाषा दलित-आदिवासी पाठक को अपना लगती है और मुख्यधारा के पाठक को यथार्थ से रू-ब-रू कराती है।

उनकी शैली वर्णनात्मक यथार्थवाद से आगे बढ़कर मनोवैज्ञानिक गहराई प्रदान करती है। संवादों के माध्यम से वे चरित्रों की आंतरिक पीड़ा और क्रोध को व्यक्त करती हैं। उदाहरणस्वरूप मजदूरों के बीच “हम कौन हैं—लिख कर दो”, “हमारा वेतन क्या है—लिख कर दो” जैसे संवाद प्रतिरोध की चिंगारी जगाते हैं।

स्त्री चरित्रों की मजबूती गुप्ता जी की खासियत है। वे पीड़िता नहीं, बल्कि जागरूक और संघर्षशील नायिकाएं हैं जो पुरुष-प्रधान समाज और पूंजीवादी शोषण दोनों के खिलाफ आवाज उठाती हैं।

### 4. प्रमुख उपन्यासों का विश्लेषण

मैसी: कोयला क्षेत्र के मजदूर जीवन, ठेकेदारी, मालिक-मजदूर संबंध और स्त्री-श्रमिक की दुर्दशा का जीवंत चित्रण।

सीता - दलित स्त्री की गरिमा, शोषण और प्रतिरोध की कहानी।

बहू-झूठाई - ग्रामीण-शहरी अंतर्विरोध, जाति-वर्ग की जटिलताएं।

ये कृतियां न केवल दस्तावेजी हैं बल्कि सामाजिक परिवर्तन की प्रेरणा भी प्रदान करती हैं।

### निष्कर्ष :-

रमणिका गुप्ता के उपन्यास दलित एवं आदिवासी विमर्श को मुख्यधारा में लाने का सशक्त प्रयास हैं। उन्होंने शोषण की संरचनाओं को बेनकाब किया है, मजदूरों की सामूहिक चेतना को उजागर किया है और स्त्री-प्रतिरोध की नई परंपरा रची है। उनका साहित्य यथार्थवादी होने के साथ-साथ आशावादी भी है—यह विश्वास दिलाता है कि संघर्ष के माध्यम से परिवर्तन संभव है।

समकालीन भारत में जहां दलित-आदिवासी समुदाय अभी भी बहिष्कृत और शोषित हैं, रमणिका गुप्ता जैसे लेखकों का साहित्य न केवल साक्ष्य है बल्कि मुक्ति का हथियार भी। भविष्य के शोधकर्ताओं को उनके पूरे साहित्य को आदिवासी फेमिनिस्ट, इको-क्रिटिकल और मार्क्सवादी परिप्रेक्ष्यों से और गहराई से पढ़ना चाहिए। साहित्य और सामाजिक न्याय के बीच का यह पुल और मजबूत होना चाहिए।

### संदर्भ :-

1. गुप्ता, रमणिका. दलित चेतना : साहित्यिक एवं सामाजिक सरोकार. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन, 2004।
2. गुप्ता, रमणिका. आदिवासी साहित्य और संस्कृति. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2008।

3. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, 2001।
4. इलैय्या, कांचा. मैं हिन्दू क्यों नहीं हूँ (अनुवादित). नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2005।
5. चौहान, सूरजपाल. दलित विमर्श की भूमिका. दिल्ली: भावना प्रकाशन, 2003।
6. उराँव, हरिराम मीणा. आदिवासी विमर्श और हिन्दी साहित्य. जयपुर: पंचशील प्रकाशन, 2010।
7. यादव, राजेन्द्र. हाशिये का साहित्य और समाज. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2006।
8. सिंह, मैनेजर पाण्डेय. साहित्य और सामाजिक यथार्थ. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 1998।
9. प्रसाद, चमनलाल. दलित साहित्य : एक मूल्यांकन. नई दिल्ली: भारतीय ज्ञानपीठ, 2009।